Vidhyayana - ISSN 2454-8596
An International Multidisciplinary Peer-Reviewed E-Journal
www.vidhyayanaejournal.org
Indexed in: Crossref, ROAD & Google Scholar

51

डॉ. सुरेन्द्र अज्ञात के वैचारिक निबंध 'जहाँ नारियों की पूजा होती है' का विश्लेषणात्मक अध्ययन

सोमा[1],

[1] शोधार्थी, सी.टी विश्वविद्यालय, लुधियाना

डॉ. राजेन्द्र सिंह 'साहिल'[2]

[2]शोध निदेशक, एसोसिऐट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, सी.टी. विश्वविद्यालय, लुधियाना

सारांश

भारतीय संस्कृति में औरत के रुतबे के बारे में बहुत बढ़ा–चढ़ा कर बातें की जाती हैं। उनकी स्थिति को सर्वोत्तम बताने हेतु बात यहीं से आरम्भ करते हैं कि 'जहाँ नारियों की पूजा होती है, वहाँ देवताओं का निवास होता है और जहाँ उनकी पूजा नहीं होती, वहाँ सब क्रियाएँ निष्फल हो जाती हैं।' यह कथन किसी और का नहीं, प्रत्युत्त स्वयं मनु का है जो उस द्वारा रचित मनुस्मृति के तीसरे अध्याय का छप्पनवाँ श्लोक है। प्रशंसामई इस श्लोक में भारतीय संस्कृ ति के नारी के बारे में दृष्टिकोण व विचारों को एक स्थान पर ही इकट्ठा कर देते हैं और अपना अन्तिम निर्णय सुना दिया करते हैं कि भारती संस्कृति में नारी हमेशा से ही उच्च दर्जे के व सम्मानित पद की अधिकारिणी रही है। इसी दृष्टिकोण के सम्मुख डॉ. सुरेन्द्र अज्ञात ने, जिनका कि वैचारिक निबंध परम्परा में महत्त्वपूर्ण स्थान है, आलेख लिखा था 'जहाँ नारियों की पूजा होती है'। उनका यह आलेख दिल्ली से प्रकाशित होने वाली पाक्षिक पत्रिका 'सरिता' (दिसम्बर (1), 1972) में प्रकाशित हुआ था जिसमें उन्होंने धर्मशास्त्रों के हवाले से सिद्ध करने का प्रयत्न किया था कि हिन्दू नारी की स्थिति–विषयक जो बड़ी बड़ी बाते करते हैं, वास्तविक स्थिति उसके बिल्कुल विपरीत रही है। उनका यह आलेख अब पुस्तकाकार में प्रकाशित उनके अड़सठ निबंधों के संग्रह 'क्या बालू की भीत पर खड़ा है हिंदू धर्म' में उपलब्ध है। इस निबंध में उन्होंने वेदों, यास्काचार्य के निरुक्त, रामायण, महाभारत, स्मृतियों, पुराणों, पंचतन्त्र आदि के संदर्भ में, भर्तृहरि, शंकाराचार्य, कबीर, तुलसीदास आदि के हवाले से तथा हमारी भाषा व लोक–संस्कृति में नारी–विषयक व्याप्त हीन विचारों को संदर्भ सहित पेश किया है। प्रस्तुत शोध आलेख में उनके इस निबंध का विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया जाएगा।

आधारभूत आलेख

विश्व की पूर्ण आबादी का आधा भाग नारियाँ मानी गई हैं। उनके प्रति दुर्व्यवहार भी सर्वमान्य व प्रचलित रहा है। प्राचीन भारतीय धार्मिक साहित्य में वर्णित औरतों के प्रति क्रूरताएँ/क्रूरतापूर्ण व्यवहार सर्वविदित है। उन्हें 'झूठ का अवतार तथा उसके मन को दुर्दमनीय कहा गया है। ....स्त्रियों के साथ कोई मित्रता नहीं, उनके हृदय भेड़ियों के हृदय हैं. ... स्त्रियाँ दास की सेना एवं अस्त्र–शस्त्र हैं.... स्त्रियाँ बिना शक्ति की हैं, उन्हें दाय नहीं मिलता, वे दुष्ट से भी बढ़कर

Vidhyayana - ISSN 2454-8596
An International Multidisciplinary Peer-Reviewed E-Journal
www.vidhyayanaejournal.org
Indexed in: Crossref, ROAD & Google Scholar

दुर्बल ढंग से बोलती हैं, ...स्त्रियों को वसीयत या दाय में भाग नहीं मिलता और न उन्हें वैदिक मन्त्रों का अधिकार ही है. ... स्त्री, शूद्र, कुत्ता एवं कौआ में असत्य, पाप एवं अंधकार विराजमान रहता है.... पत्नियाँ घृत या वज्र से हत होने पर तथा बिना पुरुष के होने पर न तो अपने पर राज्य करती हैं और न दाय भाग पर..... वह इस प्रकार स्त्रियों को आश्रित बनाता है, अतः स्त्रियाँ पुरुषों पर अवश्यमेव आश्रित रहती हैं.... वैदिक काल में भी स्त्रियाँ बहुत नीची दृष्टि से देखी जाती थीं। उन्हें सम्पत्ति में कोई भाग नहीं मिलता था तथा वे आश्रित थीं। स्त्रियों के चरित्र के विषय में जो उक्तियाँ हैं, वे वैसी ही हैं जैसा कि प्रत्येक काल में वक्रभाव एवं कुटिल विचार वाले लोगों ने कहा है– 'हे नारी, तुम दुर्बलता की खान हो।'[1]

भारतीय संस्कृति में नारी विषयक ऐसे ही कुछ विचारों के सन्दर्भ में डॉ. सुरेन्द्र अज्ञात ने लिखा है– 'रामायण में नारी को मानवीय स्तर पर न लेकर अमानवीय स्तर पर ज्यादा लिया गया है। उसके चरितनायक के पिता दशरथ का तीन तीन स्त्रियों से विवाह करना यह घोषित करता है कि तत्कालीन संस्कृति में नारी पुरुष की सम्पत्ति थी, उसकी विलास भूमि थी। यदि इस तथ्य को झुठलाने के लिए कोई यह कहे कि सन्तान प्राप्ति के लिए तीन बार शादी की गई तो भी बात बनती नहीं। जिस गुरु के आशीर्वाद से तीन स्त्रियों में सन्तानोत्पत्ति हो सकती है, वहीं गुरु पहले भी, पहली ही रानी में, ऐसा कर सकता था। यह बात नहीं है कि दूसरे विवाह की अनुमति कुलगुरु से न ली गई हो। ....राम के आदेश पर लक्ष्मण द्वारा शूर्पनखा की नाक काट देना भी यही दर्शाता है कि तत्कालीन आर्य संस्कृति में नारी के साथ सहानुभूति के साथ व्यवहार नहीं किया जाता था। कोटि कोटि भारतीय जनता की श्रद्धा की पात्र सीता के साथ भी यही कुछ किया गया। रावण से सीता को मुक्त कराकर भारतीय संस्कृति के प्रतीक राम ने उसके साथ सहानुभूति पूर्ण बरताव नहीं किया, प्रत्युत उसे अग्नि परीक्षा के लिए बाध्य किया। .....एक धोबी के घर से गुप्त रूप में सुने व सीता पर लगाए लांछन को लेकर राम ने उसे अर्थात् सीता को निर्वासित कर दिया।'[2] 'महाभारत की नारी की स्थिति भी रामायण की नारी की स्थिति से अच्छी नहीं है। जूए में सब कुछ हार कर युधिष्ठिर द्रौपदी को दाँव पर लगाकर उसे भी हार बैठता है। जब द्रौपदी को दुर्योधन के दरबार में उपस्थित करने के लिए दुश्शासन राजमहल में पहुँचता है तो वह चिल्ला उठती है.... कि 'जूए में हार चुके पुरुष के पास ऐसा कौन सा अधिकार है कि वह अपनी पत्नी को दाँव पर लगा दे और उसे दूसरों की गुलाम बना दे?' उसकी यह चीत्कार तत्कालीन शोषित नारी के चित्र को प्रतिबिंबित करता है।[3] मनुस्मृति को उदधृत करते हुए डॉ. सुरेन्द्र अज्ञात का कहना है कि 'पुरुषों को खराब करना स्त्रियों का स्वभाव है, पुरुष विद्वान हो या अविद्वान, स्त्रियाँ उसे बुरे रास्ते पर डाल देती हैं, ...चाहे माता हो, चाहे बहन हो, चाहे अपनी लड़की हो, इनके पास नहीं बैठना चाहिए, ...ललाई लिए भूरे रंग वाली, छः उंगलियों वाली, ज्यादा बालों वाली, बिना बालों वाली, ज्यादा बोलने वाली स्त्री के साथ विवाह न करें; ....जिनका कोई भाई न हो, उनके साथ विवाह न करें; .....कुमारावस्था में पिता उसकी देखभाल करता है, युवावस्था में पति और बुढ़ापे में पुत्र। नारी स्वतन्त्र नहीं की जानी चाहिए; .....वे सुंदर या कुरूप का भी ध्यान नहीं करती। वे किसी भी पुरुष की हो जाती है; ....स्त्रियों में क्रोध, कुटिलता, द्वेष और बुरे कामों में रुचि स्वभाव से ही होती हैं; ....स्त्रियों के संस्कार वेदमन्त्रों से नहीं करने चाहिए। वे मूर्ख होती हैं। वे अशुभ होती हैं; .....विधवा स्त्री का दोबारा विवाह नहीं करना चाहिए। यदि किया जाए तो धर्म का नाश होगा।[4] पुराणों में भी ऐसे बहुत से प्रकरण उपलब्ध हैं जिन में बाल विधवाओं को सिर मुंडवा कर और श्वेत वस्त्र पहन कर एकांत में रहने के आदेश दिए गए हैं.... पति चाहे लंगड़ा हो, चाहे अंधा, चाहे कुबड़ा हो, चाहे कोढ़ी हो– स्त्री को उसे छोड़ने का अधिकार नहीं है। 'चाणक्यनीतिदर्पण' में लिखा है कि अग्नि, पानी, स्त्री, मूर्ख व्यक्ति, सर्प और राजा से सदा सावधान रहना चाहिए क्योंकि ये सेवा करते करते ही उलटे फिर जाते हैं। ....स्त्रियाँ एक के साथ बात करती हुई दूसरे की ओर देख रही होती हैं और दिल में किसी तीसरे

Vidhyayana - ISSN 2454-8596
An International Multidisciplinary Peer-Reviewed E-Journal
www.vidhyayanaejournal.org
Indexed in: Crossref, ROAD & Google Scholar

का चिंतन हो रहा होता है। उन्हें किसी एक से प्यार नहीं होता। ....स्त्रियाँ कौन सा दुष्कर्म नहीं कर सकतीं? ....झूठ, दुस्साहस, कपट, मूर्खता, लालच, अपवित्रता और निर्दयता स्त्रियों के स्वभाविक दोष हैं।[5]

भर्तृहरि के श्रृंगार शतक के हवाले से डॉ. सुरेन्द्र अज्ञात लिखते हैं– 'स्त्री संशयों का भंवर, उद्दंडता का घर, उचितानुचित काम की शौकीन, बुराइयों की जड़, कपटों का भंडार, अविश्वास की पात्र होती है। महापुरुषों को सब बुराइयों से भरपूर स्त्री से दूर रहना चाहिए। न जाने धर्म का संहार करने के लिए स्त्री की सृष्टि किस ने कर दी।'[6] 'नारी नरक का द्वार है; ....नारी सकल विकार...., नारी की झांई, परत, अंधा होत भुजंग, ...ढोल, गंवार, गुंवार, शूद्र पसु नारी, ये सब ताड़न के अधिकारी।' .....आदि नितान्त निम्न स्तर के नारी–विषयक विचार हैं।[7] विधवा और वेश्या के लिए एक ही शब्द का प्रयोग होना विधवा को वेश्या और वेश्या को विधवा समझने के समान है, जो सर्वथा निंदनीय है। क्या हर विधवा वेश्या होती हैं? या, क्या हर वेश्या विधवा होती हैं? फिर दोनों के अन्तर को धूमिल करने वाला दोनों का वाचक एक ही शब्द क्यों रखा गया है? क्या यह हिन्दू/भारतीय विधवाओं का अपमान नहीं?[8] इन सभी उदाहरणों से सिद्ध होता है कि भारतीय संस्कृति में औरतों की स्थिति बहुत दयनीय थी, उनके साथ मानवोचित व्यवहार नहीं किया जाता था और पितृसत्ता ने उन्हें बड़ी बुरी तरह अपने शिकंजे में जकड़ा हुआ था।

परन्तु कुछ लोगों का मत है कि भारत में स्त्रियों की स्थिति बहुत अच्छी थी। ऐसा वह कुछ छुटपुट उदाहरणें देकर कहते हैं कि उनका उपनयन संस्कार होता था, कई औरतें पैगंबर और दार्शनिक हुई हैं, औरतें ललित कलाओं का प्रशिक्षण ले सकती थीं। मैत्रेयी व कात्यायनी की उदाहरणें भी दी जाती हैं कि मैत्रेयी ने ब्रह्मविद्या को चुना था। ऐसे ही सीता, दमयन्ती, द्रौपदी, शकुन्तला आदि की उदाहरणों से सिद्ध करने की कोशिशें करते हैं कि उन्होंने स्वयंबर रचाया। औरतों का उपनयन संस्कार यदि होता था तो उन्हें कौन–से स्कूल में भेजा गया?, जो औरतें दार्शनिक हुई, उन्होंने दर्शन को शिक्षा किस से और कहाँ से प्राप्त की?, ललित कलाएँ सीखने वाली औरतें राजा–महाराजाओं के दरबारों में नाचने–गाने वाली थीं न कि किसी सम्मान योग्य पद की अधिकारिणी थीं; इसी प्रकार स्वयंबर के सन्दर्भ में जिन औरतों के नाम लिए जाते हैं, उनके बारे में ग्रन्थों में यहीं लिखा मिलता है कि वे अपने नायकों का वरण तभी कर पाईं जब वे पुरुष इन औरतों के पिताओं की शर्तें पूरी कर सके। इन औरतों की तो अपनी कोई शर्त ही नहीं थी। इस प्रकार की कुछेक उदाहरणें पूरी औरत जाति की दयनीय स्थिति को नहीं छिपा सकती जिनके उदाहरणों से धर्मशास्त्र भरे पड़े हैं और जिनके पूरे के पूरे उदाहरण डॉ. सुरेन्द्र अज्ञात ने सन्दर्भों सहित दिए हैं। इन सन्दर्भों के माध्यम से भारतीय संस्कृति में व्याप्त पितृसत्ता के सर्वत्र बोलबाला होने के दर्शन होते हैं। औरतों की दशा दयनीय थी और यह 19वीं सदी के अन्त तक ऐसी ही रही जिसके चलते उन्हें मानवीय अधिकार दिलाने की बातें हुईं। हिन्दू कोड बिल बना परन्तु पितृसत्ता के ठेकेदारों ने उसे यकमुश्त पारित नहीं होने दिया। बाद में इसे कई टुकड़ों में पारित किया गया। इसे चाहे जैसे भी पास किया गया और औरतों को उनके अधिकार दिए गए.... इस बात का साक्षी है कि भारतीय संस्कृति में औरतों की दयनीय दशा रही है। दो–चार छिटपुट उदाहरणों के साथ यह स्पष्ट नहीं होता कि प्राचीन भारत में नारियों की स्थिति सर्वथा उच्चकोटि की थी। वर्तमान में भी उनकी ऐसी स्थिति से इन्कार नहीं किया जा सकता। ऐसे में डॉ. अज्ञात के द्वारा ठोस प्रमाण देकर सिद्ध किया गया है कि भारतीय संस्कृति में नारियों की स्थिति सन्तोषजनक नहीं थी। 'जहाँ नारियों की पूजा होती है, वहाँ देवता वास करते हैं' जैसी उदाहरणें यहीं सिद्ध करती हैं कि भारतीय संस्कृति के रखवालों के पास औरत–विषयक हाथी के दाँत खाने के और तथा दिखाने के और हैं।

Vidhyayana - ISSN 2454-8596
An International Multidisciplinary Peer-Reviewed E-Journal
www.vidhyayanaejournal.org
Indexed in: Crossref, ROAD & Google Scholar

निष्कर्ष

डॉ. सुरेन्द्र अज्ञात के निबंध 'जहाँ नारियों की पूजा होती है' पढ़ कर ऐसा परिदृश्य आँखों के सामने उभर कर आता है कि भारतीय संस्कृति में नारियों की अवस्था बहुत ही दयनीय थी। इस बीस–पच्चीस हजार वर्षों के उपलब्ध साहित्य का इतिहास में से कुछ उदाहरण उसे समाज की सर्व–स्वीकृत प्रवृत्ति मनवाने में सक्षम हो सकते हैं? इस दृष्टि से यदि हम विचार करें कि ऐसे ही ग्रन्थों में यह भी उदाहरण मौजूद है जिन से पता चलता है कि औरतों की स्थिति दयनीय थी ही नहीं? औरत की स्थिति को अच्छा कहने वालों द्वारा पेश किए जाते कुछेक सन्दर्भ व औरतों के गिने–चुने नामों के आधार पर यह नहीं कहा जा सकता है कि औरतों की स्थिति सामूहिक रूप में अच्छी थी। यदि स्थिति अच्छी थी तो फिर उनकी दयनीय स्थिति के ऐसे सन्दर्भ कि वह दुर्बलता की खान है, राजा–महाराजाओं में बहुपत्नी प्रथा का होना, युधिष्ठिर द्वारा द्रौपदी को दाँव पर लगाना, ऐसा कहना कि पुरुषों को खराब करना स्त्रियों का स्वभाव है, पुरुष विद्वान हो या अविद्ववान, स्त्रियाँ उसे बुरे रास्ते पर डाल देती हैं, किसी भी औरत चाहे वह कितनी भी करीब के रिश्ते की हो, के पास पुरुष को नहीं बैठना चाहिए, ...ऐसी ऐसी औरतों से शादी नहीं करनी चाहिए, भाई–विहीन कन्या के साथ भी शादी नहीं करनी चाहिए, ...औरतें किसी भी पुरुष की हो जाती हैं, स्त्रियों में क्रोध, कुटिलता, द्वेष और बुरे कामों में रुचि स्वभाव में होती है, स्त्रियों के संस्कार वेद मन्त्रों से नहीं करने चाहिए, वे मूर्ख होती हैं, वे अशुभ होती हैं, विधवा स्त्री का दोबारा विवाह नहीं करना चाहिए, नारी नरक का द्वार है, नारी सकल विकार, ...नारी की झांई परत, अंधा होत भुजंग, ढोल गंवार शूद्र पशु नारी, ये सब ताड़न के अधिकारी..... आदि वे ऐसे ही और सन्दर्भ कहाँ से आए? इस प्रकार यह स्पष्ट है कि कुछ उदाहरणों के आधार पर यह नहीं मान सकते कि प्राचीन भारतीय संस्कृति में औरतों की दयनीय स्थिति थी ही नहीं और न ही यह कह सकते हैं कि शत–प्रतिशत ही दयनीय थी। क्योंकि अधिकांश रूप में स्थिति दयनीय थी, इसलिए बातें उठीं व सन्दर्भ दिए गए जिसके फलस्वरूप औरतों को समान मानवीय धरातल पर लाने की बातें चलीं और अन्ततः उन्हें मानवीय अधिकार उपलब्ध करवाए गए जैसे 'हिन्दू विधवा पुनर्विवाह अधिनियम 1856', 'सती आयोग (निवारण) अधिनियम 1887', 'विशेष विवाह अधिनियम 1954', 'हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम 1956', 'अनैतिक व्यापार (निवारण) अधिनियम 1956', 'प्रसूति प्रसुविधा अधिनियम 1961', 'दहेज निषेध अधिनियम 1961', 'गर्भ का चिकित्सकीय समापन अधिनियम 1971', 'समान पारिश्रमिक अधिनियम 1976', 'सती आयोग (निवारण) अधिनियम 1987', 'गर्भधारण पूर्व और प्रसव पूर्व निदान तकनीक अधिनियम 1994', 'घरेलू हिंसा से महिलाओं का संरक्षण अधिनियम 2005', 'पैतृक सम्पत्ति का अधिकार अधिनियम 2005', 'बाल विवाह निषेध अधिनियम 2006', 'सम्मान के लिए हत्या के विरुद्ध अधिनियम 2010', 'कार्यस्थल पर महिलाओं का यौन उत्पीड़न अधिनियम 2013' इत्यादि।

इस प्रकार डॉ. सुरेन्द्र अज्ञात ने अपने निबंध 'जहाँ नारियों की पूजा होती है' में समाज में औरतों के समान मानवीय रुतबे की आवश्यकता पर बल देते हुए अपनी नारीपक्ष धर्मिता को निभाया है।

Vidhyayana - ISSN 2454-8596
An International Multidisciplinary Peer-Reviewed E-Journal
www.vidhyayanaejournal.org
Indexed in: Crossref, ROAD & Google Scholar

संदर्भ सूची

1. कश्यप (अनु.), धर्मशास्त्र का इतिहास–प्रथम भाग, पाण्डुरङõ वामन काणे, सूचना विभाग, लखनऊ, पृ. 325 पर उद्धृ
2. अज्ञात, सुरेन्द्र कुमार शर्मा, क्या बालू की भीत पर खड़ा है हिंदू धर्म?, नई दिल्लीः विश्वविजय प्रकाशन, प्रथम संस्करण, (2008), पृ. 50–51, ISBN 978–81–7987–466–0
3. वही, पृ. 51
4. वही, पृ. 52–53
5. वही, पृ. 53
6. वही
7. वही, पृ. 54
8. वही